सद्गुरु तत्व बोध
SADGURU TATV BODH

नई दिल्ली
अंक – 160

www.saikalpadhyatmsanstha.com

श्री साई शक : 36
दिसम्बर–2017

॥ ॐ श्री साईनाथाय नमः॥
॥ ॐ श्री सदगुरूनाथ दादाय नमः॥

परम पूज्य दादा महाराज के लिखे आत्मनिवेदन का एक गुरुभक्ति भरा संदेश

ज्योतिष्मति – श्रीगुरुचरित्र
विमोचन साधन – श्रीशक्तिपीठ कार्य योजना

गुरूबंधुभगिनियों से

जब मुझे जीवन के संबंधित तत्वज्ञान का शुभारंभ प्राप्त हुआ तब मैंने खुद को बड़ा भाग्यवान मान लिया। इसका अर्थ मेरी समझ में तब आया जब एक रात प.पू. बाबा ने मुझे नींद से जगाया। उस समय प्रातःकाल के चार बजे थे। छह महीने से मैं, गुरु आज्ञा के अनुसार हर रोज नित्य निमय से, 'श्रीगुरुचरित्र की पोथी का पाठ करना, माधुकरी (भिक्षा) मांगना' आदि सेवा कर रहा था। वे, पूर्णिमा के बाद के कृष्णपक्ष के दिन थे। सभी ओर अंधेरा था। तब किसी ने मुझे आवाज दी और कहा, 'बेटा उठो'। यह सुनकर जब मैं उठा तब मुझे सितारों की रोशनी नजर आई। नदी किनारे मैंने नदी के पानी से मुँह धो लिया। फिर मैंने विचार किया कि, चार दिन के बाद ही अमावस्या है। अब इस भोर के समय चंद्रमा दिखता नहीं फिर भी सब जगह प्रकाश है यह क्या चमत्कार है? किसी ने मुझे आवाज दी थी और अब सितारों की रोशनी नहीं होकर भी यहाँ स्पष्ट रूप में प्रकाश नजर आ रहा है। तब बाबा ने मुझे कहा कि, 'बाबा, इसे आत्मा अधिक प्रकाश यानी 'ज्योतिष्मति' कहते है।'' मुझे पहली जो आज्ञा मिली थी कि, '' औदुंबर जाओ, श्रीगुरुचरित्र की पोथी का पाठ करो और माधुकरी (भिक्षा) मांगो' उसका अर्थ यही था कि विचार और आहार इनकी एकरूपता होकर जीवन प्रकाशमय हो। बचपन में श्री भैरवनाथ जी ने जब मुझे यह कहा था कि, 'मुझे प्रकाश में लाओ तब मैंने उनके मंदिर में दीया जलाया था।' लेकिन दीया या निरांजन इसका अर्थ केवल ज्योत जलाने का बर्तन ऐसा नहीं है।

Publisher
Sri Saikalp Adhyatm Sanstha
"Sai Niketan"
New Delhi - 110025
Ph. : 26956561
E.mail : saikalp@gmail.com
dadab6@gmail.com

Patron
Anand Bapshet

Editorial
Vijay Kumar Varma
Jogesh Grover

Subscription
Inland
Yearly : Rs.250.00
Life time : Rs.1000.00

Overseas
Yearly : US$ 250.00
Life time : US$ 500.00

Printed By
Soni Printers
Cell : 09718657567

Published Every Month

©All rights reserved with Publisher

'निरांजन' का मतलब जिसे तीनों लोकों के स्वामित्व का 'ज्ञान' है, वह ज्ञान और इस निरांजन अवस्था का लाभ प्राप्त कर लेने के लिए मुझे तीर्थक्षेत्र औदुंबर में लाया गया था ताकि वहाँ दुनिया से तकलीफ न हो! यहाँ के सेवेकरी गुरुचरित्र की पोथी का जो पाठ करते थे उसे मैं पहले पढ़ रहा था। बाद में मुझे यह आज्ञा हुई कि अब इसके आगे, तुम्हें यह 'गुरुचरित्र' पढ़ना नहीं है बल्कि तुम्हें 'जिंदा गुरुचरित्र पढ़ना है।' जिसका मतलब यह है कि, 'मनुष्य जन्म लेकिर इस जगत में क्यों आता है? मनुष्य की, जन्म मरण से मुक्तता कैसे करनी है?' इसका ज्ञान, जो इह जगत में नहीं है, वह ज्ञान तुम्हें यहाँ बिठाकर श्रीगुरु तुम्हें बताएंगे, वह ज्ञान तुम्हें सुनना है और इसी का अर्थ है 'गुरुचरित्र'। इस जगत की उत्पत्ति, स्थिति, लय ये जो तीन अवस्थाऐं है वे अवस्थाऐं तुम्हें समझ लेना आवश्यक है। इसलिए आज तुम्हें यह प्रकाश दिखाया है अब इसके आगे इहजगत देखने के लिए तुम्हें अन्य प्रकाश की आवश्यकता नहीं है।

साधक को जब कोई इष्ट कार्य करना होता है तब उसे 'साधना' यह विषय निश्चित करना आवश्यक होता है क्योंकि साधक अवस्था में जब कार्य के कारण साधक को कीर्ति मिलती है, उसका नाम होता है, तब दुनिया वाले उसके इर्द गिर्द भीड़ करने उपस्थित होते है। उनमें से अंत तक उसके साथ कितने बाकी रहते है मतलब कुल कितने आए और कितने बाकी रहे यह देखने से यह समझ आता है कि केवल भीड़ इकट्ठा होने से कुछ नहीं होता है। जो बाकी रहते हैं उसका यह अर्थ है कि उन्हें इस विषय से हमदर्दी है और वे इस विचार से यहाँ बाकी रहे हैं कि 'हमें इस मार्ग से कुछ प्राप्त करना है।' ''साधना'।'' यह विषय इतना विशाल है कि जीवन की पूर्णता (अंत) हुई तो भी यह विषय पूर्ण नहीं होता है। अन्य लोगों को यह विशय 'विष' (जहर) जैसा लगता है और इसलिए वे लोग यहाँ से यह कह कर भाग जाते है कि, 'इस विषय में कुछ अर्थ नहीं है।' उनका कहना भी सही ही है क्योंकि यह विषय समझने के लिए उस व्यक्ति में पात्रता (योग्यता) का होना आवश्यक है। हर एक को यह लगता है कि जन्म लेने वाले सभी पात्र (योग्य) ही होते है। लेकिन इस जगत में देखा जाए तो यहाँ पात्रता रखने वाले कितने हैं और पात्र(अभिनेता) कितने हैं?इसका पता ही नहीं चलता है। उनके बारे में 'आए क्या और गए क्या' ऐसा कहना पड़ता है। इतने मनुष्य जन्म लेते है लेकिन यहाँ से जाने के (मरने के) बाद कितने याद रहते हैं? बहुत ही कम या करीबन कोई भी नहीं। यदि उस मनुष्य ने धन, दौलत, घरबार पीछे रखा होगा तो उसके बच्चे और रिश्तेदार उसे याद रखते हैं। लेकिन वह याद उस मनुष्य की नहीं होती है, उसने जो संपत्ति पीछे रखी है उसकी याद होती है। यह विषय यहाँ बताया क्योंकि आगे के विषय में, जीवन संबंधी मीमांसा महत्वपूर्ण है और साधना इस विषय का अर्थ है, 'जीवन के संबंधित तत्वज्ञान'। इसलिए 'साधना' विषय पच्चीस प्रतिशत ईश्वर के प्रति और पचहत्तर प्रतिशत हमारे इर्दगिर्द की इस दुनिया के प्रति होता है जिसका ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है।

मनुष्य को जब जन्म प्राप्त होता है तब उसके मूल शरीर में 'चेतना' धारण होती है जिस के कारण मनुष्य चल सकता है, बोल सकता है। मनुष्य के शरीर में चेतना का अस्तित्व रहता है पर जब चेतना केवल वासनापूर्ति के लिए जन्म लेती है तब वह 'जीव' अवस्था में जन्म लेती है। अतः मूल अवस्था प्राप्त होकर भी वासना के कारण नीचले स्तर का जन्म प्राप्त होता है। यदि जन्म का कारण 'वास' (अस्तित्व) होगा तो जन्म के बाद मनुष्य से सत्कर्म होते रहते है। तब यह चेतना 'जीवात्मा' अवस्था में जन्म लेती है और जन्म के बाद 'साधना' का लाभ प्राप्त होने पर जीवात्मा का 'आत्मा' रूप उदय होता है। इस अवस्था में चेतना होती है और पच्चीस प्रतिशत साधना करने से चैतन्य अवस्था प्राप्त होती है। मतलब मनुष्य 'मानव' यह संज्ञा (नाम) प्राप्त कर लेता है। मानव का अर्थ है जिसे काया, वाचा, मन इस अवस्था का लाभ प्राप्त हुआ है, वह जिसे मन है, वह मानव है। यदि पच्चीस प्रतिशत साधना करके भी मनुष्य की स्थिति में बदलाव नहीं आया तो उस मनुष्य को हर एक के सामने 'हाँजी, हाँजी' करके गर्दन झुकानी पड़ती है या

फिर अज्ञान के कारण ऐसा लगता है कि उसका सर ऊँचा हुआ है। इसलिए कहा गया है कि 'विद्या विनयेन शोभते'। (नम्रता से विद्या की शोभा है) फिर उस ज्ञान के कारण उस विनयशील (विनम्र) मनुष्य का दुनिया में सब सम्मान करते है। इसी का मतलब है कि दुनिया में पात्र (अभिनेता) बहुत है लेकिन पात्रता (योग्यता) रखने वाले कम होते हैं।

उपरोक्त विषय के बारे में कहने का कारण यह है कि आगे 'विमोचन' यह साधन सिद्ध करना है। उसके पहले विमोचन इस साधन का महत्व समझ लेना आवश्यक है क्योंकि भविष्य में जो लोग इस कार्य का लाभ लेने आएंगे उन्हें भी, ''विमोचन यह साधन और विमोचन साधन का जीवन में क्या उपयोग है'' इसके बारे में ज्ञान मिलना आवश्यक है। केवल लोग,'जिन विपत्तियों के कारण परेशान है वे विपत्तियाँ गुरुकृपा से दूर करना है' इतना ही इस कार्य का उद्देश्य नहीं है। अगर लोगों को उनके दुख के बारे में ज्ञान होता तो उन्होंने उस दुख को दूर करने का उपाय ढूँढ़ कर उसे दूर करने की कोशिश की होती। लेकिन, ''क्या आज जीवन में आया यह दुख वास्तव में दुख ही है?'' यह बात कोई नहीं समझता है। मनुष्य के दुख का एक कारण, उसके कर्म है और दूसरा कारण, 'दुख के कारणों के बारे में अज्ञान है।' बहुत से लोगों को अज्ञान के कारण ही दुख भुगतने पड़ते हैं। इस तरह मनुष्य के दुख के जो दो प्रकार होते है। उन में से आए हुए मनुष्य का दुख किस प्रकार का है?यह साधक को समझ नहीं आता है। इसलिए भक्त जब साधक के पास दुख लेकर आता है, तब साधक को उसके दुख का कारण अज्ञात होने के कारण वह साधक उस भक्त के दुख का निराकरण नहीं कर पाता है, क्योंकि मनुष्य के दुख के मूल विषय का गुरुमार्गी हुए साधक को ज्ञान नहीं होता है और इसके कारण साधक और भक्त इन दोनों की दिशाऐं अलग अलग होती हैं अतः दोनों का मिलाप कब और कैसे होगा?ईश्वर और भक्त के लिए 'युक्ति' की आवश्यकता होती है। गुरुमार्गी में 'गुरु' यह माध्यम है। 'गुरु' का उपयोग कैसे कर लें, इसका ज्ञान होना आवश्यक है। 'गुरु' यह एक विषय और 'मार्ग' यह दूसरा विषय है। 'गुरु' यह विषय आरंभ से अंत तक एक ही होता है लेकिन साधक के इस विषय का या मार्ग का केवल अनुकरण करने से उसे, उसका लाभ नहीं होगा परन्तु इस विषय का सदैव अनुसरण करके उसका सदैव स्मरण रखना आवश्यक होता है। साधक को इसलिए सदैव तत्पर रहना चाहिए कि जो साधन सिद्धता वह कर रहा है, उसका हितसंबंध हितकारक होने के लिए साधक अवस्था में कौन से बंधनों का पालन करना है, इस अवस्था में क्या परहेज रखना आवश्यक है, साधक को यह सब समझ लेना चाहिए। इसलिए प.पू. बाबा ने यह कहा कि, 'अगर कार्य करना है, तो सबसे पहले 'निराकरण' सिद्ध होना आवश्यक है।' उसके बाद 'निवारण' सिद्ध होना आवश्यक है और उसके लिए संकल्प करने की आवश्यकता है क्योंकि जो साधन सिद्ध करना है वह साधन संपूर्ण संसार के लिए उपयुक्त और लाभ दायक होना आवश्यक है। मिसाल के तौर पर जैसे– डोरा (धागा) इसका उपयोग मनुष्य के तकलीफ और बीमारी दूर करने के लिए जैसे होता है, वैसे ही वहीं डोरा जानवर के गले में पहनाने से उस जानवर को भी उससे वही लाभ होना आवश्यक है।

यह जो चराचरमय (चर अचर से भरा हुआ) जगत हम देखते है, या हमें जिस चराचरमय जगत का आभास होता है, उस जगत का निर्माण पांच तत्वों से हुआ है। जगत का कार्य और इन पाँच तत्वों का कार्य, एक दूसरे के पोषक (पूरक) होना आवश्यक है तो ही निसर्ग का और जीवन का कार्य सुख, शांति, समाधान से कार्यान्वित होगा। इसके विपरीत अगर इनमें से एकाध तत्व ज्यादा होगा और दूसरा कम होगा तो इन तत्वों के कार्य में बिगाड़ होगा। जन्म लेने का कारण अणुरेणु से ब्रह्माण्ड तक इसलिए निरंतर चलता रहता है कि एक से पाँच तत्व एक दूसरे के पोषक होते है। जब इन तत्वों में विषमता निर्माण होती है, तब इस सृष्टि पर या मानवों के जीवन में विपत्ति आती है वास्तव में आपत्ति का धर्म या उद्देश्य जग में दुख और अशांतता निर्माण करना ऐसा कभी नहीं होता है। हम 'मानव' जन्म लेते हैं –

यह हम पर ईश्वर की कृपा है। लेकिन मानव, जन्म लेने के बाद मानव होकर भी जब दानव (राक्षस) जैसे जीते है तब उसके हिस्से आपत्ति और संकट आते है और यह दोष उसके स्वयं के अज्ञान के कारण है यह वह स्वीकार नहीं करता है। इसलिए श्रीगुरु ने तीर्थक्षेत्र औदुंबर में जो साधना करने के लिए कहा था उसमें 'विमोचन' साधन सिद्ध किया गया। जन्मतः मूल तत्व में जो धारण होती है, उसमें मनुष्य के गलत ज्ञान के कारण बिगाड़ आने से उस धारणा में कमी या अधिकता का निर्माण होता है। ऐसे समय हम मानवों को फिर से मूल धारणा की प्राप्ति करा देना यही 'विमोचन' है।

पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश इन पाँच तत्वों से परिपूर्ण ऐसा निसर्ग (प्रकृति) हम मानवों के कल्याण के लिए सदैव प्रयत्नशील है। लेकिन निसर्ग का (प्रकृति का) यह कार्य इतनी शांति से होता रहता है कि हम मानवों को अनायास (सहजता से) उसका एहसास नहीं होता है। ब्रह्माण्ड के इन पाँच तत्वों का कार्य जब तक समतोज संतुलित (योग्य) प्रमाण में जारी रहता है तब तक ब्रह्माण्ड में या निसर्ग में (प्रकृति में) सुख, शांति, समाधान रहता है। लेकिन जब इनमें से किसी भी तत्व का संतुलन (योग्य प्रमाण) बिगड़ जाता है तब निसर्ग (प्रकृति) अपनी अशांतता, आंधी, बाढ़ या भूचाल ऐसी नैसर्गिक विपत्ति द्वारा व्यक्त करता है। उसी प्रकार निसर्ग के पाँच तत्वों में जब फिर से संतुलन (योग्य प्रमाण) बन जाता है, तब वही निसर्ग अपना आनंद 'इंद्रधनुष' द्वारा व्यक्त करता है।

मनुष्य भी निसर्ग का ही एक भाग है अर्थात जो पाँच तत्व, ब्रह्माण्ड के निर्माण का कारण है, उन्हीं पाँच तत्वों से पिंड का यानी मनुष्य का निर्माण हुआ है। जब मनुष्य के जीवन में इन पाँच तत्वों का संतुलन (योग्य प्रमाण) बिगड़ जाता है, तब मनुष्य को जीवन में दुख, अशांतता, तकलीफ, असमाधान आदि अवस्थाओं का अनुभव होता है मनुश्य की देह के इन पाँच तत्वों में हुआ बिगाड़, कौन से तत्व की कमी या अधिकता के कारण है?यह जान कर फिर से उसके देह को उन सब तत्वों का संतुलन (योग्य प्रमाण) प्राप्त करा देना यही 'विमोचन' है। 'विमोचन'! यह साधना तीर्थक्षेत्र औदुंबर में सिद्ध हुई। यह साधना सिद्ध करते समय हर रोज पाँच घर माधुकरी (भिक्षा) माँगने की सेवा भी मैंने की। 'माधुकरी' (भिक्षा) का मतलब है – 'माँगना'। नित्य साधना सेवा और उनके लिए आवश्यक परहेज करना इनसे मेरे देह के पृथ्वी और तेज तत्वों में जब संतुलन निर्माण हुआ, तब सेवा जारी रखते हुए मैंने श्रीगुरु से निसर्ग के तेज, वायु, आकाश इन तत्वों की माँग की और इस प्रकार पिंड की (मनुष्य की) अशांतता और दुख दूर करने का साधन सिद्ध किया गया। जो पिंड में है वही ब्रह्माण्ड में है और जो ब्रह्माण्ड में है वही पिंड में है इस सिद्धांत के अनुसार निसर्ग में जो पाँच तत्व है उनका संतुलन निरंतर रहे, इसलिए बाद में इस पृथ्वी पर श्रीशक्तिपीठ की स्थापना की गई।

मनुष्य की बुद्धि का विकास होते समय, उसी के साथ उसके अज्ञान की व्याप्ति (मात्रा) भी बढ़ रही है। इस अज्ञान के कारण मनुष्य निसर्ग से (प्रकृति से) संतुलन रखने के बजाय निसर्ग के (प्रकृति के) विरोध में जाकर प्रदूषण से निसर्ग के पाँच तत्वों में बिगाड़ निर्माण करता रहा है। प्रदूषण से हुए इन पाँच तत्वों के बिगाड़ के कारण निर्माण हुई अशांतता नष्ट करने के लिए और विश्व में तथा मानवी जीवन में सुख, शांति, समाधान का इंद्रधनुष निर्माण करने के लिए श्रीसद्गुरुकृपा से गोवा में श्रीशक्तिपीठ की स्थापना की गई। श्रीशक्तिपीठ की स्थापना यद्यपि अभी हुई है तो भी श्रीशक्तिपीठ की कार्ययोजना तीर्थक्षेत्र औदुंबर में की सेवा से निर्धारित हुई है

।। शुभं भवतु।।

एक तुच्छ जन्म जन्म का सेवक,
श्री साईकल्प अध्यात्म संस्था